चतुर्थ राष्ट्रीय जल संगोष्ठी

2011

जल संसाधनों के प्रबंधन में नवीनतम तकनीकों का प्रयोग

16–17 दिसम्बर, 2011

राष्ट्रीय जलविज्ञान संस्थान
जलविज्ञान भवन
रूडकी–247667 (उत्तराखंड)

कृत्रिम भूजल पुनःपूरण

राजन वत्स[1] सुमन्त कुमार[1] चन्द्र प्रकाश कुमार[1]
वैज्ञा. बी वैज्ञा. बी वैज्ञा. एफ

[1]राष्ट्रीय जलविज्ञान संस्थान, रूड़की

परिचय

समाप्ति की ओर अग्रसर भूजल संसाधनों (Ground Water Resources) का दक्षतापूर्वक प्रबन्धन विश्व के उन सभी वैज्ञानिकों एवं अभियंताओं के लिए एक चुनौती है जो भूजल संसाधनों के विकास एवं प्रबन्धन के क्षेत्र में कार्यरत हैं। सामान्य परिस्थितियों में किसी जलभृत (Aquifer) के, प्राकृतिक रूप से होने वाले पुनः पूरण एवं तद्नुसार उस जलभृत की सुरक्षित उत्पादक क्षमता (Safe Yield Capacity) में वृद्धि की जा सकती है। जलभृतों के पुनः पूरण हेतु मनुष्यों द्वारा इनके जल भण्डारण में की जाने वाली संवृद्धि ही कृत्रिम पुनः पूरण (Artificial) है। विशुद्धता पूर्वक कहा जाये तो कृत्रिम भूजल पुनः पूरण (Artificial Groundwater Recharge) एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा भूजल भृत (Groundwater Aquifer) से जल निकास की दर, संवर्द्धन (Augmentation) की दर से कम रखी जा सके।

मानव निर्मित कोई कार्य योजना जिसकी कल्पना जलभृत के भूजल भण्डारण सवंर्द्धन के उद्देश्य से की गई हो, को कृत्रिम भूजल पुनः पूरण व्यवस्था के रूप में समझा जा सकता है। ग्रामीण क्षेत्रों की पेयजल आपूर्ति के परिप्रेक्ष्य में पेयजल स्रोतों की निरंतरता को अक्षुण्ण बनाये रखा जाना एक नितान्त गम्भीर प्रश्न है। इसके लिए प्रयास हेतु सरकार की भूमिका एक कार्यान्वयन प्राधिकरण (Impementation Authority) से हटते–हटते मात्र एक मार्गदर्शक (Consultant) तक सीमित हो चली है।

विश्व के प्रायः सभी देशों में विभिन्न प्रकार की वर्षाजल दोहन (Rain Water Harvesting) संरचनाओं के विकास एवं निर्माण के द्वारा समाज के लिए इनकी उपयोगिता सिद्ध हुई है। वर्षा जल दोहन एवं कृत्रिम जल पुनः पूरण, जल उपलब्धता की निरंतरता को बनाये रखने में सक्षम हैं और इसके लिए एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं अतः स्थानीय निकायों द्वारा इस प्रकार की गतिविधियों को विशाल स्तर पर कार्यान्वित किया जाना एक अति लाभकारी कृत्य होगा।

कृत्रिम जल पुनः पूरण प्रक्रिया को अपनाने का मुख्य ध्येय यद्यपि भूजल भंडारों की वृद्धि एवं उनका संरक्षण करना है किन्तु इसके अन्य कई लाभदायो प्रयोग भी हैं। ग्रामीण एवं नगरीय क्षेत्रों के लिए विकसित की गई कृत्रिम भूजल पुनः पूरण की विधियाँ विभिन्न संस्थाओं द्वारा व्यवहार में लाई गई हैं। इनका पुनरावलोकन करने पर पाया गया कि भारत में विभिन्न संस्थाओं द्वारा कृत्रिम भूजल पुनः पूरण पर किये गये पयोग अपरिरूद्ध (Unconfined), अर्द्धपरिरूद्ध (Semi Unconfined) तथा परिरूद्ध (Confined) जलभृतों के कृत्रिम जल पुनः पूरण की संभावनाओं को दर्शाने वाले हैं।

कृत्रिम भूजल पुनः पूरण की प्रक्रिया को प्रभावित करने वाले कारकों के अधिक होने के कारण यह प्रक्रिया जटिल है और यही कारण है कि इसका ज्ञान सम्पूर्णता के स्तर तक अभी भी नहीं हो पाया है। कृत्रिम भूजल पुनः पूरण पर अधिकतर अध्ययन स्थल विशेष (Site Specific) प्रकार के हुए हैं और वर्णनात्मक प्रकृति के हैं जिसके कारण अन्य क्षेत्रों में अथवा अन्य प्रकार के स्थलों पर कृत्रिम भूजल पुनः पूरण के प्रयोग किये जाने से अधिकतम सफलता प्राप्ति की पूर्ण सम्भावनाओं का आकलन ठीक प्रकार से नहीं हो पाता। कृत्रिम पुनः पूरण की तकनीक की उपयोगिता की गणना करने में अग्रणी किंतु दुर्ग्राहय (Elusive) एक तथ्य यह भी है कि भूजल पुनः पूरण को अर्थशास्त्रीय (Economics) एवं संस्थापरक (Institutional) दृष्टिकोण से पर्याप्त ध्यान नहीं मिला है एवं इस क्षेत्र में आगे व्यापक अध्ययन किये जाने की आवश्यकता है।

एक अनुमान के अनुसार वर्ष 2050 में हमारे देश की कुल जल की आवश्यकता के 25 प्रतिशत को सुनियोजित प्रकार से कृत्रिम भूजल पुनः पूरण योजनाओं के क्रियान्वयन तथा अपशिष्ट जल के पुनःचक्रण (Recycling) द्वारा पूरा किया जा सकता है। लोगों को उनके आवासीय तथा व्यवसायिक स्थलों पर उपरोक्त दोनों साधनों के द्वारा जल उपलब्ध कराया जाना सम्भव है। आने वाले समय में वर्षा जल दोहन (Rain Water Harvesting) तथा कृत्रिम भूजल पुनः पूरण की ऐसी योजनाओं के क्रियान्वयन को वरीयता

(Priority) दी जानी चाहिए जिनमें जनता का योगदान सम्भव हो। ऐसी परियोजनाओं (Projects) की परिपक्वता अवधि (Gestation Period) कुछ महीनों से लेकर कुछ वर्ष तक हो सकती है। इसके अतिरिक्त इस तरह की गतिविधियाँ सामान्यतया दीर्घावधि की होने पर ही सतत भूजल संवर्द्धन की कल्पना को मूर्त रूप दिया जाना संभव है। भारत सरकार द्वारा जल संरक्षण एवं जलसंभर विकास (Watershed Development) कार्यक्रमों को दी गई प्रमुखता से उपरोक्त वर्णित रणनीति स्पष्ट परिलक्षित है।

कृत्रिम भूजल पुनः पूरण की पद्धतियाँ

जल को सोद्देश्य (Deliberately) भूमिगत जलाशयों में भंडारण किये जाने के पीछे कई कारण हैं। कृत्रिम जल पुनः पूरण की अधिकतर परियोजनाएं भविष्य में प्रयोग के लिए जल को सुरक्षित कर लेने के लिए अभिकल्पित की जाती हैं। अन्य ऐसी परियोजनाओं में नमकीन पानी (Salt Water) के धृष्टागम (Intrusion) पर नियन्त्रण रखने के लिए, जल छानने, जल की हानि पर नियन्त्रण हेतु, अपशिष्ट जल का निस्तारण एवं खनिज तेल के क्षेत्रों मे अपरिष्कृत खनिज तेल के द्वितीयक प्रत्युद्धरण (Secondary Recovery) हेतु कृत्रिम जल पुनः पूरण किया जाता है।
मुख्य रूप से कृत्रिम पुनः पूरण की पद्धतियों को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है–

1. प्रत्यक्ष पुनः पूरण पद्धति
2. परोक्ष पुनः पूरण पद्धति

प्रत्यक्ष पुनः पूरण की पुनः दो तकनीकें – (क) सतही विस्तारण तकनीक (Surface Spreading Technique) तथा (ख) अधः सतही तकनीक (Sub Surface Technique) हैं।
कृत्रिम पुनः पूरण की बहुप्रचलित विधियों में सतह जल सम्पर्क बढ़ाने की तकनीकों का प्रयोग किया जाता है जिससे कि जल की अधिकतम मात्रा रिस–रिस कर रसातल में पहुँचे और भूजल भंडारों की अधिक वृद्धि हो। कृत्रिम भूजल पुनः पूरण हेतु भू–सतह पर जल का फैलाव करने वाली जो तकनीकें उपलब्ध हैं उनमें क्षेत्र विशेष को जलाप्लावित करना, खातिकाओं, गड्ढ़ों व नालियों का निर्माण, सतही सिंचाई, जल धाराओं में विभिन्न परिवर्तन (Stream Modification) एव बहुप्रचलित विधि – अपवाह संरक्षी संरचनाओं का निर्माण जो कि छोटे जन समुदायों की जल आपूर्ति में भी सहायक हैं, आदि मुख्य हैं।
अधः सतही (Sub Surface) तकनीकों में भरण अथवा अंतःक्षेपण कूप (Injection Wells) तकनीक एवं गुरूत्वीय दाब (Gravity Head) पुनः पूरण तकनीक सामान्यता व्यवहार में लाई जाती है।
कृत्रिम पुनः पूरण की अधः सतह पद्धतियों में प्रेरित (Induced) पुनः पूरण तकनीक जो कि पम्प कूप (Pumping Well), संग्रहण कूप (Collection Well), रिसाव दीर्घा (Infiltration Gallery), जलभृत उपांतरण (Aquifer Modification) एवं भूजल संरक्षी संरचनाओं पर आधारित है, को व्यवहार में लाया जाता है किंतु इसमें कुशल श्रम (Skilled Labour) तथा अन्य संसाधनों की आवश्यकता होती है।
सतही जल फैलाव तकनीक द्वारा कृत्रिम पुनः पूरण के लिए योजना बनाते समय निम्न बिन्दुओं पर विचार कर लेना श्रेयस्कर होगा–

- पुनः पूरित किया जाने वाला जलभृत अपरिरूद्ध (Unconfined) तथा पारगम्य (Permeable) होना चाहिए साथ ही इसकी गहराई भी काफी हो जिससे कि इसकी भंडारण क्षमता पर्याप्त हो।
- अधिकतम रिसन दर बनी रहे इसके लिए आवश्यक है कि अधोस्तर (Surface) की मृदा काफी पारगम्य हो।
- अधिभौम संस्तर (Vadose Zone) पारगम्य हो और इसमें मृतिका पिंड (Clay Lenses) न हो जिससे दुःस्थित भौम जल (Perched Water) स्थिति उत्पन्न न हो।
- जलभृत में भूजल स्तर काफी नीचा होना चाहिए ताकि भौमजल भृत (Phreatic Aquifer) में भूजल वृद्धि होने पर जलाक्रांत (Water Logging) दशाएं उत्पन्न न हों।
- जलभृत की मृदाएं मध्यम चल जलीय चालकता (Hydraulic Conductivity) वाली होनी चाहिए ताकि जल संग्रहण दीर्घ अवधि तक बना रहे और समय पड़ने पर प्रयोग में लाया जा सके।
- कृत्रिम पुनः पूरण के लिए किसी स्थान विशेष की स्थलाकृति (Topography) का विशेष महत्व है। यह काफी हद तक पुनः पूरण दर को नियत्रित करती है। बिना कटकों (Ridge) तथा अवनालिका (Gully) वाली धरती जो सौम्य ढलान (Gentle Slope) वाली हो पुनः पूरण हेतु उपयुक्त होती है।

कृत्रिम पुनः पूरण की विधियाँ

(क). सतह जल विस्तारण विधि

अधिक क्षेत्रफल वाली द्रोणियों (Basins) के लिए उपयुक्त यह विधि उन परिस्थितियों में अपनाई जाती है जबकि जलभृत अपरिरूद्ध होते हैं तथा कोई अपारगम्य (Impermeable) सतह इनके ऊपर नहीं होती। जल रिसन दर मृदा के प्रकार पर निर्भर करती है अतः अगर ऊपर की सतह की मृदा रेतीली है तो

स्वाभाविक है कि जल रिसन दर अधिक होगी और सिल्ट प्रकार (silt Type) अथवा क्ले प्रकार (Clay Type) की मृदा होने पर जल रिसन दर अपेक्षाकृत कम होगी। यहाँ ध्यान देने योग्य तथ्य यह है कि मृदा प्रकार (Soil Type) के अतिरिक्त जलगुणता (Water Quality) भी रिसन दर को प्रभावित करती है। जल में अघुलनशील किंतु निलंबित (Suspended) ठोस पदार्थ जल रिसन दर को काफी गिरा सकते हैं। विभिन्न जल विस्तारण विधियाँ निम्न प्रकार से हैं–

1. जल आप्लावन विधि अथवा कृत्रिम बाढ़ द्वारा पुनः पूरणः अपेक्षाकृत कम ढालू स्थलाकृति (Topography) वाले क्षेत्रों के लिए यह विधि उपयुक्त है। वितरण नालियों (Distribution Channels) द्वारा जल की एक पतली चादर सी बिछा कर पूरे क्षेत्र को जलमग्न कर दिया जाता है। इस प्रकार स्थानीय वनस्पति को हानि पहुँचाये बिना ही पूरे क्षेत्र से कृत्रिम पुनः पूरण किया जा सकता है।
2. रिसन टैंक (Percolation Tank) तथा द्रोणियों से कृत्रिम पुनः पूरणः इस विधि में छोटे–छोटे रिसन टैकों अथवा छोटी द्रोणियों की एक श्रृंख्ला बनाकर उनमें जल भर दिया जाता है। इलाके की स्थलाकृति के अनुसार द्रोणी का आकार निर्धारित किया जाता है। भूमि के समतल होने पर द्रोणी का आकार बड़ा होगा तथा ढालू होने पर कम। अधिकतम रिसन दर के लिए पानी की 1.25 मीटर (बौमानी न्यूयार्क) गहराई उपयुक्त पाई गई है क्योंकि इससे कम या अधिक गहराई होने पर रिसन दर विपरीत रूप से प्रभावित होगी। कठोर शिला क्षेत्रों (Hard Rock Areas) के साथ– साथ रेतीली भूमि में यह विधि दक्षता पूर्वक अपनाई जा सकती है। फिर भी कठोर शिला क्षेत्रों में यह विधि अधिक प्रभावकारी मानी गई है क्योंकि इन क्षेत्रों में भूमिगत विभंग (Fractured) एवं अपक्षीण (Weathered) चट्टानें (Rocks) अधिक दर से जल ग्रहण करते हैं।
3. धारा संवर्द्धन : प्राकृतिक जल धाराओं से होने वाला जल रिसाव भूजल भंडारों के पुनः पूरण का एक महत्वपूर्ण स्रोत्र है। जल धाराओं में उपलब्ध जल की मात्रा जब रिसन द्वारा जल हानि की मात्रा से अधिक हो जाती है उस दशा में अतिरिक्त जल, अपवाह (Runoff) के रूप में बह जाता है। जल धारा पर रोक बाँध बनाकर अथवा जल धारा की चौड़ाई बढ़ाकर अपवाह के रूप में चले जाने वाले इस अतिरिक्त जल को पुनः पूरण हेतु प्रयोग में लिया जा सकता है। रोक बांध (Check Dam) बनाने का स्थल ऐसा चुना जाना चाहिए जहाँ पर अधिकतम जल रिसाव होता है। इसके लिए बांध के नीचे के तल का काफी मोटाई वाला एवं पारगम्य होना आवश्यक है। अपक्षीण शैल (Weathered Rocks) होने पर यह आदर्श स्थिति हो सकती है। ऐसी स्थितियों में जल संग्रहण सामान्य जल धारा की लम्बाई में निहित रहता है। बाँध की ऊँचाई सामान्यतः 2.0 मीटर से अधिक नहीं रखी जाती अधिकतम अपवाह का दोहन हो सके इसके लिए इन बाँधों को धारा के प्रवाह की दिशा में ऊपर (Upstream) से नीचे (Down stream) की ओर श्रृंखलाबद्ध बनाया जाना चाहिए।
4. नलिकाओं एवं गड्ढों द्वारा कृत्रिम पुनः पूरणः असमतल भौगोलिक स्थिति वाले इलाकों के लिए गड्ढे एवं नालिकाएं (Trenches) अथवा खातिका या खूड (Furrows) अधिकतम सम्पर्क क्षेत्र (Contact Area) प्रदान करते हैं। इस विधि में पास–पास स्थित उथले तथा चपटी तली वाले गड्ढे और इसी प्रकार की नालिकाएँ बनाकर इन्हें उपयुक्त जल स्रोत्र अथवा किसी जल धारा आदि से सम्बद्ध कर देर तक पुनः पूरण करने हेतु छोड़ दिया जाता है।

सामान्यतया गड्ढों व नालिकाओं को तीन प्रकार (Pattern) से बनाया जाता है –

i. पार्श्विक (Lateral)
ii. वृक्षाकृतिक (Dendritic)
iii. समोच्च (Contour)

यहाँ ध्यान रखने योग्य तथ्य यह है कि कम संचरण शीलता (Transmissibility) वाले क्षेत्रों में गड्ढ़ों व नालियों की सघनता (Density) अधिक होगी।

(ख). अधः सतह पुनः पूरण विधियाँ (Sub Surface Methods of Recharge)

कृत्रिम पुनः पूरण की इन विधियों में पुनः पूरण करने वालो संरचनाएं भूमिगत होती हैं और वहीं से भूजल को सीधे पुनः पूरित करती हैं। इस प्रकार की संरचनाओं में मुख्य रूप से पुनः पूरण कूप, (Recharging Wells) पुनः पूरण भूमिगत स्तंभ अथवा कूपक (Shafts) एवं अनुपयोगी अर्थात् वर्तमान में जलहीन कुएँ आदि हैं।

(1). पुनः पूरण कुएं (Recharge Wells)

पुनः पूरण कूप प्रायः दो प्रकार के होते हैं (1) अंतक्षेपण कूप (Injection Well) जिनमें कृत्रिम पुनः पूरण हेतु बल पूर्वक पम्प आदि के द्वारा जल भेजा जाता है तथा (2) कृत्रिम पुनः पूरण कूप जिनमें गुरूत्वीय बल के प्रभाव में जल स्वतः भूमिगत हो जाता है।

अन्तःक्षेपण कूप, नल कूपों के समान ही होते हैं। शोधित सतह जल से पम्प द्वारा गहरे जलभृतों के भूजल भंडारों के संवर्द्धन का यह एक उपयुक्त तरीका है। इस तकनीक में प्रयुक्त कुए ग्रीष्म काल में पम्प कूपों (Pumping Well) की भाँति प्रयोग में लाय जा सकते हैं। इस तकनीक के द्वारा एकल (Single) अथवा बहुसंख्यक (Multiple) जलभृतों को पुनः पूरित किया जा सकता है। इस विधि से पुनः पूरण किया जाना अपेक्षाकृत मंहगा पड़ता है तथा अंतक्षेपण कूपों के निर्माण व अनुरक्षण हेतु तकनीकी विशेषज्ञों की आवश्यकता होती है। उचित होगा कि परित्यक्त नलकूपों का प्रयोग कृत्रिम पुनः पूरण हेतु किया जाये क्योंकि लागत मूल्य के दृष्टि कोण से यह अल्पव्ययी होगा।

कम भौम जलस्तर (लगभग 50 मीटर तक) वाले जलभृतों में पुनः पूरण कूपों का प्रयोग कम खर्चीला होता है क्योंकि पुनः पूरण, जल पम्प किये बिना गुरूत्व के अधीन हो जाता है। पुनः पूरण कूप दो प्रकार के हो सकते हैं – शुष्क एवं आर्द्र। शुष्क प्रकार के पुनः पूरण कूपों में छन्ना तल भौम जल स्तर से ऊपर रखा जाता है। इन कुओं में जाली अवरूद्धता अधिक हो सकती है। ऐसा जल में धुली हुई गैसों के अवमुक्त होने के कारण होता है कूप पुनः विकास की विधियाँ इन कुओं के पुनरोद्धार में प्रभावकारी नहीं पाई गई हैं।
आर्द्र प्रकार के कुएं वह कुएं होते हैं जिनमें छन्ना, भौम जल स्तर से नीचे रखा जाता है।

(2) गर्त एवं कूपक

अपारगम्य सतह जब भूजल से कम गहराई पर अवस्थित होती है तब गर्त एवं कूपक द्वारा कृत्रिम पुनः पूरण किया जाना उचित होता है। इस प्रकार की संरचनाएं कृत्रिम पुनः पूरण हेतु मितव्ययी भी साबित होती हैं तथा जलभृत को सीधे ही जल समृद्ध बना सकने में समर्थ होती हैं। कूपक का व्यास सामान्यतया 2 मीटर से अधिक रखा जाता है ताकि अधिक जल का प्रवेश जलभृत में हो सके। जल स्रोत्र से सिल्टमुक्त जल का प्रवेश गर्त अथवा कूपक में आवश्यक है ताकि इनके अवरूद्ध होने की संभावना न रहे। अगर इन संरचनाओं में किसी कारण से सिल्ट युक्त जल का प्रवेश अवश्यंभावी हो तो उस दशा में इन संरचनाओं को कंकड़ों एवं मोटे कण वाले रेत से भरने के उपरांत अथवा अलग से बनाये गये फिल्टरों से होकर ही इनमें जल छोड़ा जाना चाहिए ताकि जलभृत तक पहुचने से पूर्व अपशिष्ट पदार्थों से मुक्त जल ही कृत्रिम पुनः पूरण हेतु प्रयोग में आये और ये संरचनाएं अवरूद्ध न हों।
गर्तो एवं कूपकों का लाभ यह है कि ये रिसन टैंकों अथवा अन्य सतही जल फैलाव वाली विधियों की अपेक्षा बहुत कम स्थान घेरते हैं। साथ ही अन्य विधियो की तरह इनमें जल की हानि मृदा आर्द्रता (Soil Moisture) अथवा वाष्पन (Evaporation) के रूप में न्यूनतम होतो है।

(3). खनन कूप

भौम जल स्तर में गिरावट आने से जलोढ़ (Alluvial) तथा कठोर शिला (Hard Rock) क्षेत्रों मे प्रायः काफी संख्या में खनन कूप जो पहले कभी जल के स्रोत हुआ करते थे और अब सूख चूके हैं तथा किसी प्रयोग में नहीं लाये जा पा रहे हैं, अनुपयागी अवस्था में तिरस्कृत पड़े हैं, का उपयोग कृत्रिम पुनः पूरण हेतु सफलता पूर्वक किया जा सकता है। सतही जल स्रोतों से अतिरिक्त जल को इस प्रकार के कुंओं में व्यवस्थित प्रकार से ला कर सूखे जलभृतों को सीधे ही जल समृद्ध किया जा सकता है। कुंओं की तली तक पानी का यदि किसी पाइप द्वारा लाया जा सके तो वायु के बुलबुलों के कारण जल के मार्ग अवरूद्ध होने की संभावना कम हो जाती है। जैसा कि पहले भी कहा गया है, कृत्रिम पुनः पूरण की इन तकनीकों में जल का सिल्ट मुक्त होना अति आवश्यक है अन्यथा ये संरचनाएं शीघ्र ही अनुपयोगी हा जाती हैं।

(ग). प्रेरित पुनः पूरण

यह कृत्रिम पुनः पूरण की अप्रत्यक्ष विधि है जिसमें कृत्रिम पुनः पूरण हेतु ऐसे जलभृतों से पम्पिंग द्वारा जल लिया जाता है जो चलजलीय रूप से सतह जल स्रोतों यथा पूर्ण वर्षीय जल धाराओं, झीलों अथवा अस्तर विहीन नहरों से सम्बद्ध होते हैं। जलभृत में से अत्याधिक मात्रा में जल को पम्पिंग द्वारा निकाल लिए जाने के फलस्वरूप भौम जलस्तर में काफी गिरावट आती है और अवनमन शंकु (Cone of Depression) पानी निकाले जाने वाले स्थान पर भूमि के भीतर उत्पन्न हो जाता है। भूजल स्तर की गिरावट सतह जल को भूजल पुनः पूरण के लिए प्रेरित करती है। रेतीली संरचनाओं द्वारा नदी तल तथा जलभृतों के आपस में सम्बद्ध रहने की स्थिति में यह युक्ति काफी कारगर साबित हुई है।

कृत्रिम पुनः पूरण हेतु मूलभूत आवश्यकताएं

कृत्रिम पुनः पूरण हेतु प्रदान किये जाने वाले जल की प्राप्ति हेतु सतत जल स्रोत्र की उपलब्धता की वरीयता उच्चतम है। मानसून अवधि में उपलब्ध आवश्यकता से अधिक अपवाह का आकलन कर इसे कृत्रिम पुनः पूरण हेतु प्रयोग में लिया जा सकता है। कृत्रिम पुनः पूरण हेतु उपलब्ध जल के इस अवयव को निम्न आंकड़ों का विश्लेषण कर ज्ञात किया जा सकता है–

i. मानसून वर्षा प्रतिरूप (Monsoon Rain fall Pattern)

ii. वर्षा की आवृत्ति (Frequency of Rain fall)
iii. वर्षा दिवसों की संख्या (Number of Raining Days)
iv. एक दिवस में अधिकतम वर्षा (Maximum one day Rain fall)
v. समय और स्थानानुसार इसकी परिवर्तनशीलता (Temporal & spatial variability)
मानसून अवधि में अतिरिक्त अर्थात् मुख्य आवश्यकताओं को छोड़कर जल आकलन हेतु मानसून की वर्षा से प्राप्त जल का 50 प्रतिशत अपवाह के रूप में उपलब्ध जल माना जा सकता है।

वर्षा जल दोहन एवं कृत्रिम पुनः पूरण

नगरीय क्षेत्रों में जहां पर घरों की छतों पर पड़नें वाला वर्षा जल यदि किसी प्रकार एकत्र किया जा सके तो इसका सर्वोत्तम प्रयोग कृत्रिम पुनः पूरण हेतु किया जा सकता है। छतों की सतह पर से उपलब्ध जल को विभिन्न वर्षा जल दोहन तकनीकों से संरक्षित कर इसे भूजल तक ले जाया जाता है। वर्षा जल दोहन के मुख्य लाभ निम्न हैं–
1. वर्षा जल शुद्धतम अवस्था में होता है, कार्बनिक तत्वों से मुक्त होता है तथा इसकी प्रकृति मृदु होती है।
2. यह वर्तमान भूजल की गुणवत्ता में सुधार लाने वाला है यदि इसे कृत्रिम पुनः पूरण में प्रयोग किया जा सके।
3. वर्षा जल दोहन एवं संबंधित कृत्रिम पुनः पूरण संरचनाएं किफायती (Economical) तथा परिस्थितिक मित्रवत (Eco Friendly) होती हैं।
4. इन संरचनाओं का निर्माण एवं अनुरक्षण सरल होता है।
किसी भी कृत्रिम पुनः पूरण व्यवस्था के प्रभावकारी, एवं दक्षता पूर्ण संचालन के लिए कृत्रिम पुनः पूरण स्थल (Site Selction) का चयन निम्न बिंदुओं को दृष्टिगत रख कर किया जाना चाहिए–
i. जलीय (Hydraulic) तथा भूवैज्ञानिक (Geologic) सीमाओं की स्थिति
ii. जलभृत की संचरण शीलता (Transitivity)
iii. जलभृत की गहराई (Thickness of Aquifer)
iv. आश्मिक परिच्छेदिका (Lithological Profile)
v. संग्रहण क्षमता (Storage Capacity)
vi. जलीय चालकता (Hydraulite Conductivity)
vii. जलभृत में प्राकृतिक जल अंतर्वाह (In Flow) एवं बहिर्वाह (Out flow)
viii. सरंध्रता (Porosity)
ix. कृत्रिम पुनः पूरण हेतु भूमि की उपलब्धता
x. आस–पास के इलाकों में प्रचलित भूमि उपयोग (Land use) एवं स्थलाकृतिक (To pographical) विवरण
xi. पुनः पूरण हेतु प्रयोग में लाये जाने वाले जल का परिणाम एवं गुणवत्ता
xii. पुनः पूरण को नियंत्रित करने वाले आथिक एवं न्यायिक दृष्टिकोण
xiii. सम्पूर्ण परियोजना पर जनमत अनुमोदन (Public Acceptance)

निष्कर्ष

जल संरक्षण हेतु कृत्रिम पुनः पूरण की विभिन्न व्यवस्थाओं को व्यवहार में लाते समय नवीनतम वैज्ञानिक शोध के ज्ञान से लाभान्वित होने का प्रयास किया जाना चाहिए। कृत्रिम पुनः पूरण योजनाएं अगर जन समुदायों की योजनाओं के रूप में उभरें तो यह जनता, योजना एवं व्यवस्था सभी के लिए लाभदायी होगा। जनता के योगदान के अभाव में ऐसी परियोजनाओं की परिकल्पना श्रेयस्कर सिद्ध नहीं हो सकती।

राष्ट्रीय जलविज्ञान संस्थान
जलविज्ञान भवन
रूड़की–247 667 (उत्तराखंड)

दूरभाष : 01332–272106
फैक्स : 01332–272123
ई–मेल : nihmail@nih.ernet.in
वेब : www.nih.ernet.in